गुल्लक

माधव केलकर

मेरे एक दोस्त के दो बच्चे काफी दिनों से मुझसे गुल्लक लाकर देने की ज़िद कर रहे थे। मैं मिट्टी की दो गुल्लक लेकर गया और दोनों को एक-एक दी। बच्चे खुश हुए और उन्होंने गुल्लक में पैसे जमा करने का फैसला किया।

करीब एक महीने बाद बच्चों ने मुझ तक खबर भिजवाई कि पहले वाली गुल्लक भर गईं हैं, एक-एक गुल्लक और चाहिए। एक शाम मैं दो और गुल्लक लेकर मित्र के घर पहुँचा। दोनों बच्चे अपनी-अपनी गुल्लक लेकर आए। दोनों गुल्लक लगभग भर गईं थीं। अन्दाज़ से हरेक गुल्लक में 100-100 रुपयों की चिल्लर भरी होगी। मेरे मित्र की माली हालत ऐसी नहीं है कि एक महीने में हरेक बच्चा गुल्लक में सौ रुपए की बचत पूँजी इकट्ठी कर सके। गुल्लक को लेकर मेरी भी बचपन की यादें जुड़ी हैं। अपनी इच्छाएँ मार कर गुल्लक में काफी धीरे-धीरे पाँच, दस, पच्चीस, पचास पैसे के सिक्के जमा होते रहते थे और जिज्ञासा भी बनी रहती थी कि गुल्लक में कितना पैसा इकट्ठा हो गया होगा। लेकिन गुल्लक फोड़कर देखने पर हमेशा मायूसी ही हाथ आती थी। हर बार गुल्लक में उम्मीद से कम पैसा मिलता था।

खैर, एक बार फिर लौटते हैं बच्चों की गुल्लक की ओर। दोनों बच्चों की भरी-पूरी गुल्लक देखकर हम सभी हैरत में थे कि एक महीने से कम समय में ही गुल्लक सिक्कों से लबालब कैसे हो गई! बच्चों के माता-पिता इस बात से आश्वस्त थे कि बच्चों ने घर से या आस-पास से पैसे चुराकर गुल्लक में नहीं डाले हैं।

चित्रः जितेन्द्र ठाकुर

थोड़ी देर बाद काफी सहजता से पूछने पर कि गुल्लक इतनी जल्दी कैसे भर गई, बच्चों ने मासूमियत से बताया, "घर के सामने से रोज़ मिट्टी (मृत शरीर) को मरघट लेकर जाते हैं (उनके घर के पास मरघट है)। लोग मिट्टी ले जाते हुए लाई-मखाने-पैसे फेंकते हैं। हम मिट्टी के पीछे-पीछे थोड़ी दूर तक जाते हैं। कई बच्चे सिक्कों को लूटते हैं। हम भी सिक्के लूट लेते हैं। बहुत-से बच्चे उन सिक्कों से मूँगफली-चना, आइस्क्रीम, गुटखा वगैरह खरीद लेते हैं। हमारा मन भी मूँगफली-आइस्क्रीम के लिए मचलता था, पर हम पैसा गुल्लक में डालते थे।"

इतना सुनना था कि मित्र और उसकी पत्नी की हालत ऐसी हो गई कि काटो तो खून नहीं।

उन दोनों ने थोड़ा रुककर एकाएक फैसला सुनाया कि मुर्दों पर लुटाया गया पैसा अपवित्र होता है। ऐसा पैसा घर में रखना ठीक नहीं है, इसलिए दोनों गुल्लक कल कुएँ या तालाब में डाल दी जाएँगी।

यह सब सुनकर बच्चे अत्यन्त रुआँसे हो गए। वे किसी भी हालत में गुल्लक देने को तैयार नहीं थे।

मुझसे भी रहा न गया। मैंने बच्चों की तरफदारी करते हुए कहा, "पैसा तो पैसा होता है, मुर्दों पर लुटाया गया हो या मेहनत करके कमाया गया। फिर किसी सिक्के पर यह लिखा थोड़े ही होता है कि यह भगवान के चरणों पर चढ़ाया गया था या मुर्दों पर लुटाया गया था। और देखने वाली बात यह भी है कि बच्चे यदि इन पैसों की मूँगफली खा चुके होते तो हम लोगों को इस बात का पता भी नहीं चलता। आखिर इन सिक्कों के साथ बच्चों की अपनी दबाई गई इच्छाओं-मन्शाओं का संग्रह भी है। हम इन सब बातों को इतनी आसानी से कैसे दरकिनार कर सकते हैं?"

मेरी बातें सुनकर मित्र बोला, "आप ठीक कह रहे हैं। लेकिन लोग कहते हैं कि ऐसा पैसा फलता नहीं है।" मित्र की पत्नी अभी भी अपने पुराने रुख पर कायम थीं, "दोनों गुल्लक में चाहे जितनी भी रकम हो, कल दोनों गुल्लक कुएँ या तालाब में सिरा दी जाएँगी।" जो नई गुल्लक बच्चों के लिए लेकर गया था वे मैं वहीं छोड़कर उठ गया।

रास्ते भर उन बच्चों के बारे में सोचता रहा जिन्होंने पैसे के शुभ-अशुभ पक्ष के बारे में सोचे बिना एक साथ काफी सारे सिक्कों को देखने की आस में या जमा किए गए सिक्कों से किन्हीं इच्छाओं की पूर्ति के सपने बुनते हुए इन गुल्लकों को भरा था।

अगले दिन गुल्लकों को लेकर क्या फैसला हुआ, मैं नहीं जानता। मैंने जानने की कोशिश भी नहीं की। आपके विचार से दोनों गुल्लकों के साथ क्या होना चाहिए? अपने विचार संदर्भ के पते पर जल्द लिख भेजिए।

माधव केलकर: संदर्भ पत्रिका से सम्बद्ध।
चित्र: जितेन्द्र ठाकुर: फाइन आर्ट्स से एम.ए. किया है। एकलव्य में कार्यरत।